विपश्यना

साधकों का
मासिक प्रेरणा पत्र

बुद्धवर्ष २५३१ | मार्गशीर्ष पूर्णिमा | ५ दिसम्बर १९८७ | वर्ष १७ अंक ६

धम्म वाणी

सब्बपापस्स अकरणं, कुसलस्स उपसम्पदा ।
सचित्तपरियोदपनं, एतं बुद्धान - सासनं ॥

धम्मपद—१४/५.

सभी पाप कर्मों को न करना, पुण्य कर्मों की संपदा संचित करना, अपने चित्त को परिशुद्ध करना (धोते रहना) —यही बुद्धों की शिक्षा है।

विपश्यना संगोष्ठी-१९८६

भूमिका (१)

एक राजा के चार पुत्र थे। वे एक दिन सारथि से बोले - ''हम किंसुक देखना चाहते हैं। हमें किंसुक वृक्ष दिखलाएँ।''

सारथि चारों को एक एक करके जंगल में ले गया। उसने ज्येष्ठ पुत्र को किंसुक ठूंठ की अवस्था में दिखलाया, दूसरे को छोटे पत्ते निकलने के समय, तीसरे को फूल निकलने के समय और चौथे को फल निकलने पर।

आगे चल कर जब चारों भाई एक साथ बैठे तो बात चलाई कि किंसुक कैसा होता है। एक बोला - ''जैसे जला हुआ ठूंठ।'' दूसरे ने कहा - ''जैसे न्यग्रोध वृक्ष।'' तीसरा बोला - ''जैसे मांसपेशी।'' चौथे ने कहा— जैसे सिरीष।''

भले ही चारों भाईयों ने किंसुक को प्रत्यक्ष देखा था परन्तु इसके बारे में उनके मन में भ्रान्ति बनी रही। यदि वे सभी अवस्थाओं में किंसुक को देख पाते तो उनके भ्रान्त होने का कोई कारण ही न रह जाता। वस्तुत: आंशिक सत्य बड़ा भ्रामक होता है। ज्योंही सत्य को समग्रता से, अर्थात् सभी ओर से, परख लेते हैं त्योंही **यथार्थ सत्य** प्रकट होने लगता है और सर्व प्रकार की भ्रांतियां दूर हो जाती हैं।

भौतिक शरीर और चित्त के बारे में भी यही स्थिति है। इनका भासमान स्वरूप आंशिक सत्य होने के कारण बड़ा भ्रामक होता है और सारे सांसारिक विवादों की जड़ है। परन्तु यदि इनकी सभी अवस्थाओं को जानकर इनकी अंतिम सच्चाई को जान लें तो सारे विवाद स्वत: ही समाप्त होकर मानवमात्र का परम कल्याण होने लगता है। विपश्यना यही करती है। इस साधना से शरीर और चित्त का विविध प्रकार से दर्शन करके इनके बारे में अनुभूतियों के स्तर पर अन्तिम सच्चाई को जान लेते हैं ये कितने अनित्य हैं, कैसे क्षण प्रतिक्षण बदलते रहते हैं, इनके प्रति **मैं , मेरे** का भाव जगाना कितना हानिकारक है, ऐसा करते ही कैसे अंदर ही अंदर गाँठें बांधने का काम शुरू हो जाता है, गांठें बांधते ही कैसे मन तनावों से भरने लगता है, तनावों के साथ-साथ कैसे मानसिक तथा शारीरिक रोग प्रकट होने लगते हैं और शनैः शनैः जीवन दुःसाध्य होने लगता है। जब अनुभूतियों के स्तर पर दुःख का दर्शन करके दुःख का निदान कर लेते हैं, तब बड़ी समझदारी के साथ दुःख-चक्र से बाहर निकलने का रास्ता मिल जाता है और रास्ता यह है कि अनित्यबोध के आधार पर अनात्मभाव को पुष्ट करके अपनी गांठें खोलने लगते हैं। ऐसा करने से देर-सवेर ऐसा समय आ ही जाता है जब कोई भी मनुष्य दुःखों से पूर्णतया छुटकारा पाकर **निर्वाण** का साक्षात्कार कर सकता है। इस प्रकार **विपश्यना** दुःखसागर से पार ले जाने वाली अनपायिनी, सुदृढ़ तरणि (नौका) के समान है।

साधना-विधि

इस साधना के तीन अंग हैं—शील, समाधि और प्रज्ञा। इनका विस्तृत विवेचन सयाजी ऊ बा खिन के लेख में किया गया है। शील-पालन पहला कदम है—अर्थात् जीवहिंसा से विरत रहना, चोरी से विरत रहना, असत्य भाषण से विरत रहना, ब्रह्मचर्य का पालन करना और नशीले पदार्थों के सेवन से विरत रहना। दूसरा कदम समाधि है। सभी संप्रदाय वाले समाधि पर बल देते हैं परन्तु उनके आलंबन साम्प्रदायिक होने से सर्वग्राह्य नहीं होते। इस विधि में नैसर्गिक सांस को ही आलम्बन बनाया जाता है जो सार्वजनीन है। समाधि में पुष्ट होने पर शरीर और चित्त के भेदन का काम किया जाता है जो प्रज्ञा का क्षेत्र है। शरीर पर होने वाली संवेदनाओं को तटस्थ भाव से देखने से उनका अनित्य स्वभाव प्रकट होने लगता है। जैसे-जैसे अनित्य बोध जागता है,दुःख का कारण समझ में आने लगता है।

जोधपुर में सुरक्षा विभाग में कार्यरत वैज्ञानिक डॉ. रामगोपाल की मान्यता है कि यह तकनीक शतप्रतिशत वैज्ञानिक है। जैसे विज्ञान में प्रयोग, अनुसंधान तथा विश्लेषण कर करके सत्य तक पहुंचा जाता है वैसे ही इस साधना-विधि में अपने बारे में प्रकट होने वाली सच्चाइयों का विश्लेषण कर करके परम सत्य का साक्षात्कार किया जाता है।

बम्बई के उद्योगपति एवं टेकनीशियन श्री जयन्ती लाल शाह की मान्यता है कि विपश्यना कोरी तकनीक ही नहीं है बल्कि विकारों से डट कर मुकाबला करने की भी योजना है। योजना इस मायने में है कि साधक को कुछ समय के लिए सर्वप्रकार की बाह्य परिस्थितियों से अलग-थलग कर दिया जाता है जिनके कारण वह प्रतिक्रिया किया करता था, जैसे लोगों से मिलना-जुलना, बातचीत करना (टेलीफोन पर भी), कारोबार चलाना, अखबार पढ़ना, डायरी रखना, प्रार्थना

करना, माला जपना, पूजा करना अथवा इसी प्रकार और कुछ भी करना। इस प्रकार साधक कुछ समय के लिए मात्र प्रकृति के हवाले हो जाता है। यह प्रकृति का सिद्धान्त है कि जब किसी वस्तु को **चार्ज** करना बन्द कर देते हैं तब **डिस्चार्ज** होना शुरू हो जाती है। विपश्यना शिविर के दस दिन वस्तुतः **डिस्चार्ज** के ही दिन होते हैं जबकि अंतर्मन की गहराइयों में दबे हुए विकार फूट-फूट कर बाहर निकलने लगते हैं और इस प्रकार इनसे छुटकारा होने लगता है।

प्रो. मुरलीधर उपाध्याय के अनुसार इस साधना पद्धति में व्यक्तियों द्वारा अपने-अपने स्वभाव के अनुकूल **कम्मट्ठान** (ध्यान का कर्मस्थान) चुना जा सकता है। कोई स्वयं ऐसा न कर सके तो इस कार्य हेतु कल्याणमित्र की सहायता लेनी चाहिए। परम्परा के अनुसार भगवान् बुद्ध कल्याणमित्र थे जो सर्वज्ञ होने के कारण सभी व्यक्तियों के स्वभाव को जानते थे और मांग करने पर उपयुक्त कर्मस्थान दे देते थे। भगवान् की अनुपस्थिति में कोई भी अर्हन्त, अनागामि, सकदागामि, स्रोतापन्न, बुद्धवाणी में पारंगत कर्मस्थान देने के लिए सक्षम है।

रंगून यूनिवर्सिटी में इंजीनियरिंग विभाग के इंजीनियर ऊ आंग थेन ने ब्रहमदेश में चार प्रकार की विपश्यना साधना प्रचलित होना बतलाया है हालांकि इनमें से सबसे अधिक लोकप्रिय साधना वही है जिसे कल्याणमित्र सत्यनारायणजी गोयन्का सिखला रहे हैं। यह साधना विधि लेडी सयाडॉ से सयातै जी को, सयातै जी से सयाजी ऊ बा खिन और सयाजी ऊ बा खिन से कल्याणमित्र गोयन्का जी को प्राप्त हुई। इस साधना विधि से गोयन्का जी इतने लाभान्वित हुए कि वे इसे सर्वसुलभ बनाने के लिए हर सम्भव प्रयत्न कर रहें हैं।

विपश्यना के स्रोत

सर्वश्री अयोध्याप्रसाद प्रधान तथा औरंगाबाद के प्रख्यात पालि विद्वान प्रो. एस. के. मेश्राम ने पालि साहित्य में विपश्यना से सम्बन्धित सन्दर्भों की विस्तृत जानकारी दी है। परन्तु इनमें सबसे महत्वपूर्ण सन्दर्भ **दीघनिकाय** का **महासतिपट्ठानसुत्त**'' है। इस सुत्त के प्रामाणिक हिन्दी अनुवाद का कार्य आरम्भ हो चुका है।

विपश्यना और मानवीय सम्बन्ध

परडेनिया विश्वविद्यालय (श्रीलंका) में पालि एवं बुद्धिस्ट स्टडीज विभाग की प्रो. (श्रीमती) लिली डी'सिल्वा का कथन है कि मानव एक सामाजिक प्राणी है। वह अकेला तो अपने आपको असहाय पाता है परन्तु जब औरों के साथ एकजुट हो जाता है तब बड़ी से बड़ी समस्याओं का मुकाबला कर सकता है। पर ऐसा करने के लिए उनके पारस्परिक सम्बन्धों का स्वस्थ होना बहुत आवश्यक है। आपसी सम्बन्धों को सुधारने में विपश्यना की भूमिका बड़ी महत्वपूर्ण है।

मन को कलुषित करने वाले नीवरणों को दूर करने में विपश्यना का बड़ा योगदान है। उदाहरणस्वरूप क्रोध एक ऐसा विरोधीभाव है जो मन को कलुषित कर देता है और बहुत जल्दी आपसी सम्बन्धों को बिगाड़ देता है। इसकी तुलना आग से की गई है जो अपने आधार को भी जला डालती है जैसा कि क्रोध उस व्यक्ति को भी जला देता है जिसके चित्त में जागता है। **विसुद्धिमग्ग** के अनुसार किसी अन्य व्यक्ति को गाली देना उसके ऊपर विष्ठा फेंकने के समान है जो अपने निशाने पर लगे या न लगे परन्तु उस हाथ को तो दूषित कर ही देती है जो इसे फैंकता है।

अंगुत्तरनिकाय के **आघातवग्ग** में यह बतलाया गया है कि किसी विरोधीभाव (यथा क्रोध) से कैसे निपटना चाहिए। इसके अनुसार जिस किसी व्यक्ति पर क्रोध आ रहा हो उसकी चारित्रिक विशेषता को ध्यान में रखते हुए क्रोध का शमन करना चाहिए। यदि किसी ऐसे व्यक्ति के प्रति क्रोध जागे जिसके शारीरिक कर्म अशुद्ध हों किन्तु वाणी के कर्म शुद्ध हों तो उसके अशुद्ध शारीरिक कर्मों की ओर ध्यान नहीं देना चाहिए, उसकी वाणी की शुद्धता की ओर ध्यान देना चाहिए जैसे किसी चीथड़े के मजबूत हिस्से को फाड़ कर काम में ले लिया जाय और बाकी बचे हुए की अवहेलना कर दी जाय। यदि किसी ऐसे व्यक्ति के प्रति क्रोध उमड़े जिसके शारीरिक कर्म शुद्ध हों पर वाणी के कर्म अशुद्ध हों तो उसके वाणी के अशुद्ध कर्मों की ओर ध्यान नहीं देना चाहिए जैसे कोई तालाब में उतर कर शैवाल तथा पपड़ी को हटा कर अंजलि में पानी भर कर पी ले। यदि किसी ऐसे व्यक्ति के प्रति क्रोध होने लगे जिसके शारीरिक कर्म अशुद्ध हों, वाणी के कर्म भी अशुद्ध हों परंतु बीच बीच में थोड़े समय के लिए वह शुद्ध रहता हो तो उसके अशुद्ध शारीरिक एवं वाणी के कर्मों की ओर ध्यान नहीं देना चाहिए, बल्कि जो बीच बीच में थोड़े समय के लिए वह प्रीति-युक्त रहता है उसी की ओर ध्यान देना चाहिए, जैसे किसी गोपद में सीमित जल हो और कोई तृषित व्यक्ति उस पानी को बिना क्षुब्ध किए दोनों घुटनों और दोनों हाथों के बल पर झुक कर गौ-बैल की तरह पानी पीकर चल दे। यदि किसी ऐसे व्यक्ति के प्रति क्रोध उत्पन्न हो जिसके शारीरिक कर्म अशुद्ध हों, थोड़े समय के लिए भी वह न शुद्ध रहता हो, न प्रीतियुक्त रहता हो तो ऐसे व्यक्ति के प्रति करुणा, दया, अनुकम्पा रखनी चाहिए, जैसे किसी निर्जन प्रदेश में रोगी व्यक्ति की सहायता करने का भाव उदय होता है। यदि किसी ऐसे व्यक्ति के प्रति क्रोध जागे जिसके शारीरिक कर्म शुद्ध हों, वाणी के कर्म शुद्ध हों और बीच बीच में भी शुद्ध एवं प्रीतीयुक्त हो तो ऐसे व्यक्ति के शुद्ध शारीरिक कर्मों, शुद्ध वाणी के कर्मों तथा बीच बीच की शुद्धता एवं प्रीति को ध्यान में रखते हुए विरोधी-भाव का शमन करना चाहिए, जैसे कोई गरमी से घबराया हुआ प्यासा व्यक्ति किसी पुष्करिणी में उतर कर स्नान करके और जल पीकर बाहर आ जाए और वहीं वृक्ष की छाया में लेट जाए। इस प्रकार इन पांच प्रकार के विरोधी-भावों के उत्पन्न होने पर इनका सर्वथा उपशमन करना चाहिए।

बम्बई की प्रमुख समाज-सेविका एवं सक्रिय कार्यकर्तृ श्रीमती वीणा गांधी ने अनेक उदाहरण देकर पति-पत्नी के आपसी सम्बन्धों पर प्रकाश डाला है। उनके कथनानुसार जब पति-पत्नी में कलह आरम्भ होता है तब कई बार इस ओर भी ध्यान जाता है कि आखिर गलती कहां हुई। यदि कोई व्यक्ति एकान्त में शान्तिपूर्वक बैठ जाए और अपने भीतर अपने मानस को टटोलने लगे तो बहुत जल्दी इन

कलहों का कारण पता लग जाता है। वस्तुतः एकान्त में शान्ति से बैठना ही विपश्यना साधना की शुरुआत है।

विपश्यना साधना आत्म-निरीक्षण की साधना है। इसका शाब्दिक अर्थ है किसी भी वस्तु को विशेष रूप से, नैसर्गिक रूप से, अथवा समग्र रूप से देखना। इस साधना से मनुष्य को अपने जीवन की समस्याओं को समझने और उन्हें हल करने में बहुत सहायता मिलती है। मनुष्य यह समझने लगता है कि समस्याएं कैसे पैदा होती हैं, क्यों बनी रहती हैं, कैसे समाप्त हो जाती हैं और कैसे इनके दुष्परिणाम को कम किया जा सकता है। यह भी समझ में आने लगता है कि यदि कहीं परिवर्तन लाना आवश्यक होता है तो यह परिवर्तन अपने आप में ही लाना होता है, दूसरे में नहीं। इस प्रकार विपश्यना कोरी साधना ही नहीं, सार्थक जीवन जीने की कला है। जैसे-जैसे मन निर्मल होता जाता है मनुष्य की समस्याएं ठोस आकार प्राप्त करने से पहले ही नदारद होने लगती हैं।

विपश्यना और समकालीन समाज

बम्बई के श्री प्रवीणचन्द्र शाह के अनुसार समाज में परिवर्तन लाने में विपश्यना बहुत बड़ी भूमिका निभा सकती है क्योंकि समाज मनुष्यों का समूह है और मनुष्य के मानस को प्रभावित करने में यह साधना बेजोड़ है। सब बीमारियों की जड़ असन्तुलित मन है और विपश्यना मन को सन्तुलित बनाती है।

पांडीचेरी के उद्योगपति श्री एन. एम. भट्ट का कथन है कि जैसे-जैसे अधिक से अधिक लोगों का मानस शुद्ध होने लगता है वैसे वैसे समाज में परिवर्तन आने लगता है क्योंकि शुद्ध चित्त वाले व्यक्ति समाज को प्रभावित किए बिना नहीं रह सकते।

राजस्थान विश्वविद्यालय के उपकुलाधिपति प्रो. उन्नीथान ने बतलाया है कि राजस्थान विश्वविद्यालय द्वारा केन्द्रीय कारागृह तथा राजस्थान पुलिस अकादमी, जयपुर में कुछ वर्ष पूर्व आयोजित विपश्यना शिविरों के बंदियों तथा पुलिस अधिकारियों पर पड़ने वाले प्रभाव के बारे में अध्ययन किया गया था। इसके फलस्वरूप पाया गया कि इस साधना से उनके मानस में काफी परिवर्तन आया है। बंदियों को अपने दुष्कृत्यों का अहसास हुआ और पुलिस अधिकारियों की अपने दायित्वों के प्रति जागरूकता बढ़ी। इससे यह सिद्ध होता है कि यदि समाजकण्टक बंदी और सामान्यतया असंवेदनशील समझे जाने वाले पुलिस अधिकारी भी विपश्यना से प्रभावित होते हैं और उनके मानस में संवेदनशीलता आती है तो सामान्य व्यक्ति तो इस साधना से प्रभावित हुए बिना रह नहीं सकता। इसलिए विपश्यना साधना से समाज में क्रान्तिकारी परिवर्तन लाना सम्भव है।

सेमिनार में दो विपश्यी साधकों रिचर्ड हैमरस्ले तथा जॉन क्रेगन जो कि आस्ट्रेलिया में सीरियन हाउस नामक रिहैबिलिटेशन सेंटर के संस्थापक एवं संचालक भी हैं, का संयुक्त लेख पढ़ा गया जिसमें उन्होंने यह बतलाया है कि पश्चिमी ऑस्ट्रेलिया में सीरियन हाउस में नशीली दवाओं का अत्याधिक सेवन करने वाले व्यक्तियों को सामान्य जीवन में पुनः स्थापित करने का पुनीत कार्य किया जाता है। यह केन्द्र अपने उपचार के अलावा इन व्यक्तियों को विपश्यना के दस-दस दिन के शिविरों में बैठाता है। यही नहीं, इस केन्द्र का ८० प्रतिशत स्टाफ भी इन शिविरों में से गुजर चुका है। इन सभी लोगों पर इस साधना का बड़ा चमत्कारिक प्रभाव पड़ा है जैसा कि साधना कर लेने के बाद से एक भी व्यक्ति ऐसा नहीं है जो किसी भी रूप में मद्यपान अथवा अवैध दवाओं को काम में लेता हो। इससे स्पष्ट होता है कि जिस किसी समाज में नशापता करने वाले व्यक्तियों की बहुतायत हो उसमें विपश्यना के प्रभाव से बहुत बड़ा परिवर्तन लाया जा सकता है।

अमेरिकी लेखक प्रो. थीओडोर एम. वेस्टल ने स्वीकार किया है कि विपश्यना समकालीन समाज के दुःखों को दूर करने का उपाय बतलाती है। यह साधना पद्धति चित्त-शुद्धि का मार्ग प्रशस्त करती है। इस साधना से वही लाभ होते हैं जिनकी तलाश अनेक विक्षिप्तों को है, अर्थात् मानसिक तनावों तथा चिन्ताओं से छुटकारा पाना। चूंकि तनाव, चिंता, आदि मन में पैदा होते हैं अतः मन को शुद्ध करने वाली विद्या के प्रति लोगों का रुझान होना स्वाभाविक है। बहुत से अमेरिकन ऐसे उपायों की खोज में हैं जो उनकी वर्तमान जीवन-प्रणाली के दबावों से उनको मुक्ति दिला सकें, अतः पंचशील के सिद्धान्त उन्हें बहुत प्रभावित करेंगे। मौजूदा अमेरिकन शब्दावली में पंचशील निम्न रूप में ग्राह्य हो सकते हैं:—

(१) **हिंसा से विरति** — युद्ध, घरेलू संघर्ष. स्वयं से घृणा, शान्ति के प्रयास तथा सुलह-सफाई, वातावरण की सुरक्षा, परिस्थिति विज्ञान (ecology)

(२) **चोरी से विरति** — लोभ, भौतिक पदार्थों की स्पृहा से मुक्ति, आत्मनिर्भरता, झूठे विज्ञापन निकालने और मुनाफाखोरी से दूर रहना।

(३) **ब्रह्मचर्य** — स्वस्थ यौन-सम्बन्ध, प्रेम, बौद्धिक कामुकता, खेल, कला।

(४) **असत्य भाषण से विरति** — सरकारी तन्त्र, पारिवारिक जीवन, अपने आप, अपने काम में ईमानदारी।

(५) **नशे-पते से विरति** — अच्छे काम, मित्रता, प्रेम तथा त्यागभाव, अध्ययन, ध्यान साधना (बजाय सुरापान अथवा नशीली दवाओं के सेवन के)

पंचशील का यह स्वरूप यह सिद्ध कर देगा कि विपश्यना साधना समकालीन समाज में व्यवहार में लाई जा सकती है और यह आलोचना समाप्त हो जायगी कि भगवान् बुद्ध की शिक्षा का मठों के बाहर उपयोग नहीं हो सकता। अमेरिकन मानने लगेंगे कि यह विद्या वास्तव में "**बहुजनहिताय, बहुजनसुखाय, लोकानुकम्पाय**" प्रतिपादित की गई है।

(क्रमशः)

(२० दिसम्बर १९८६ से १ जनवरी १९८७ तक धम्मगिरि पर आयोजित "विपश्यना संगोष्ठि" में विद्वानों द्वारा पढ़े गए लेखों का संक्षिप्त हिन्दी अनुवाद साधकों के लाभार्थ क्रमशः प्रकाशित किया जा रहा है——सं.)

पू. गुरुजी की बहन सीतादेवी सिंहानिया का देहावसन

कलकत्ता निवासिनी ६१ वर्षीया श्रीमती सीतादेवी पिछले १२ वर्षों से नियमित विपश्यना साधना करती रही थी। इस साधना से उसके स्वभाव में बेहद सुधार हुआ था और जीवन में अभूतपूर्व मानसिक शांति उपलब्ध हुई थी। वह कुछ दिनों से बीमार चल रही थी फिर भी गुरुजी के पिछले कलकत्ते के शिविर में आग्रहपूर्वक आनापान से विपश्यना लेने तक शामिल हुई और गुरुजी की मैत्री लेकर अपने घर लौटी।

उसकी मानसिक शांति बनी रही पर शारीरिक अस्वस्थता बढ़ती गयी। अन्तत: अचेतन अवस्था में कोमा में आ गयी परन्तु देह त्यागने के पूर्व विपश्यी बहनों और परिवारवालों के सान्निध्य में होश जागा और विपश्यना के होश में ही प्राण छूटे और तत्पश्चात् कई घंटों तक देह की उष्णता बनी रही। विपश्यना-परिवार की मंगल मैत्री!

साधकों के उद्गार

बड़ौदा के रबर बैलून फैक्ट्री के मालिक श्री प्रभुदयाल चौधरीने १९६९ से लेकर अब तक अनेक शिविर किए, वे लिखते हैं, ''मुझे १९७९ में ब्लड कैंसर की बीमारी हो गयी थी। साधना के बल से ही मैं इस बीमारी से छुटकारा पा सका। अब करीब ७ वर्ष से मेरा स्वास्थ्य बिल्कुल ठीक है।''

— o —

पूना विश्व विद्यालय के वाणिज्य-विभाग के प्रवक्ता श्री पंढारेनाथ विनायक मई ८६ से अब तक ८ शिविर कर चुके हैं, वह लिखते हैं, ''मैं अनेक वर्षों से मानसिक उद्विग्नता का रोगी रहा हूँ लेकिन विपश्यना शिविर करने के बाद मुझे इस क्षेत्र में सुधार हुआ है। इसके अतिरिक्त शारीरिक पीड़ाओं [illegible]मिक समस्याओं तथा लोगों से पारस्परिक व्यवहार करने में भी बहुत लाभ हुआ है।''

दोहे धरम के

चर्म चक्षु से देखते, दर्शन भ्रामक होय।
जागे प्रज्ञा चक्षु जब दर्शन सम्यक् होय॥

सम्यक् दर्शन के बिना सम्यक् ज्ञान न होय।
बिन दर्शन बिन ज्ञान के सम्यक् चरित्र न होय॥

दिखे पराए व्यक्ति में सिर्फ दोष ही दोष।
देख न पाए गुण कभी, कहाँ गँवाया होश?

अपना भला न कर सका, देख पराए दोष।
होश जगा, सुधरन लगा, जब देखे निज दोष॥

देखी मन की गंदगी, देखे मन के दोष।
देखत देखत हो गया, मन मानस निर्दोष॥

पंचशील संपन्न हो, हो समाधि संपन्न।
जब प्रज्ञा संपन्न हो, तभी धर्म संपन्न॥

दूहा धरम रा

सील धरम पालन भलो, निरमल भली समाधि।
प्रग्या तो जाग्रत भली, दूर करै भव व्याधि॥

आतै जातै सांस पर, र वै निरंतर ध्यान।
सहज सांस की सजगता, साधन आनापान॥

चित सूं चित रो समन कर, चित सूं चित्त सुधार।
चित्त स्वच्छ कर चित्त सूं, खोल मुक्ति रा द्वार॥

चल्यो सुधारण जगत नै, मिनख घणो नादान।
स्वयं सुधर पायो नहीं, बातां करै बखान॥

जो धारै निरमल हुवै, धरम इसो निकलंक।
अनपढ़ के बिदवान के, के राजा, के रंक॥

ज्यूं ही चाख्यो धरम रस, पुलकित होग्या प्राण।
इसो धरम रस सै चखै, सैं को हो कल्याण॥

मेसर्स मोतीलाल बनारसीदास
बंगलो रोड, जवाहर नगर, दिल्ली - ११० ००७
की मंगल कामनाओं सहित

विपश्यना विशोधन विन्यास के लिए प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादक : रामप्रताप यादव, धम्मगिरि, इगतपुरी - ४२२ ४०३. दूरभाष : ८६
मार्गशीर्ष पूर्णिमा * मुद्रण स्थान : विपश्यना प्रेस, धम्मगिरि, इगतपुरी, दूरभाष : ७६, १७६, * Dec./87

वार्षिक शुल्क रु. १०/-
आजीवन शुल्क रु. १००/-

'विपश्यना' रजि. नं. 19156/71
पोस्टल रजि. नं. NS(M) 16/87

Licence No. NS 18
to post without prepayment

प्रेषक :
विपश्यना विशोधन विन्यास
धम्मगिरि, इगतपुरी - ४२२ ४०३
(जि. नासिक, महाराष्ट्र, मध्य रेल्वे)